UNIVERSAL
LIBRARY

OU_180835

UNIVERSAL
LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H81.6/S56मि.ह Accession No. G.H.2153

Author शुक्ल, उमाशंकर बिहारी "तरल"

Title मेघमाला / 1952

This book should be returned on or before the date last marked below.

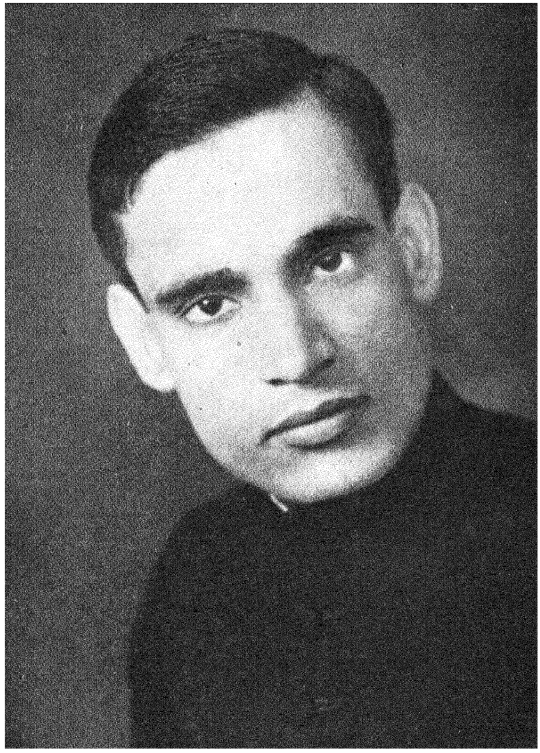

कवि श्री 'तरल'

गीत-संकलन

श्यामबिहारी शुक्ल 'तरल'

प्रकाशक
साहित्य-निकेतन
कानपुर

चतुर्थ चरण
प्रथम संस्करण
१९५२
मूल्य ३॥)

मुद्रक—जे० के० शर्मा
इलाहाबाद लॉ जर्नल प्रेस
इलाहाबाद

परिचय

मैं कोई लेखक नहीं, आलोचक होना तो दूर रहा किन्तु वर्षों से कतिपय हिन्दी-कवियों का सत्संग मुझे अवश्य मिला है, और उन्होंने अपना स्नेहपात्र बनाकर अपनी उदारता और आत्मीयता का परिचय भी दिया है। इसी नाते मेरे मित्र कानपुर के उदीयमान कवि श्री० 'तरल' जी ने मुझे यह आदर दिया कि इस संग्रह की कविताओं के संबन्ध में मैं दो शब्द लिखूं. फिर उनका आग्रह कैसे टालूं ? मुझे तो केवल पढ़ने और सुनने का अभ्यास रहा है, अतएव मैंने केवल गुण ग्रहण करना ही सीखा है, दोष परखने की मुझमें न तो रुचि है और न क्षमता ही। गुण दोषों की सम्यक् विवेचना तो विद्वान आलोचक ही कर सकेंगे मैं तो केवल हृदय से कवि के हृदय के बोल सुनने वाला हूँ।

अस्तु, प्रस्तुत कविता संग्रह में अधिकांश कविताये छायावादी होते हुए भी अभिव्यक्ति में प्रकाशवादी है, स्पष्ट, प्रसाद गुणपूर्ण एवं प्रवाहपूर्ण। भाषा में सौष्ठव, शब्दचयन में लालित्य, और गीतों में झंकार है कहीं-कहीं अभिव्यक्ति में मौलिक बाँकपन भी। भाव पक्ष की दृष्टि से कवि की काव्यधारा में अधिकांश वैयक्तिक सूक्ष्म अशरीरी प्रेम वियोग की गीतोर्म्मियाँ उठतीं गिरतीं दृष्टिगोचर होती है, ऊँची लहरें नहीं, गहरे भँवर नहीं, तूफ़ान नहीं।

इन कविताओं में यौवन सुलभ प्रेम की मीठी-मीठी आग है। प्रकृति के

उपादानों द्वारा हृदय का आकुल करुण निवेदन है उसमे अंतर्जगत की एकान्तिक पुकार है। वाह्य जगत की गत्यात्मक पुकार नही जैसी है परन्तु पुकार अंतर्मुखी हो या बहिर्मुखी, कवि की सफलता तो इसमे है कि उसके काव्य में भावनाओ की पूर्णता, तथा एकतारता हो और उसके साथ अनुभूति एवं मर्मस्पर्शी अभिव्यञ्जनाओं द्वारा विषयानुकूल रस संचार करने की क्षमता हो, इस दृष्टि से मुझे कवि के कुछ गीत एवं कुछ गीतों की कुछ पंक्तियाँ अच्छी लगी।

प्रकृति सौन्दर्य चित्रण की दृष्टि से—"अरुण अञ्चल हिल रहा है।" (गीत नं० ४) आँखों के सामने एक रंगीन चित्र उपस्थित कर देता है।

विरह माधुरी मे पगे हुए कतिपय गीत

जैसे— **"वर्षा से भीगी रात तुम्हारी सुधि आई।"**

. . . . . .

"दुख से पीली बरसात तुम्हारी सुधि आई।"

(गीत नं० ९)

सुन्दर गीत हैं।

कुछ कविताओ की कुछ पंक्तियाँ हृदय को बरबस झकझोर देती हैं—उदाहरणार्थ,

"आओ नूपुर की ध्वनि बन कर
कर लो तन को मन में विलीन"

(गीत नं० २९ के अन्तर्गत)

"आवाज न तुम सुन पाओगी।
अज्ञात प्रणय की दूरी है,
कितनी अतृप्त मजबूरी है;
तुम मेरे शब्दों मे मेरा ही स्वर बन कर लहराओगी।"

(गीत नं० ८)

यह प्रसन्नता की बात है कि कवि ने प्रेम भावना मे सयम और मर्यादा की रक्षा की है, स्थूल इन्द्रियता का असस्कृत-विकार भी कही नही है कवि का आत्म समर्पण यदि कही--

"पैरों के नीचे दब दब कर
पाया प्रियतम का आलिंगन"

(गीत नं० ७ के अन्तर्गत)

बन जाता है, तो कही--

"जो आत्म समर्पण करने से मिलते है
उन वरदानों से प्रेम नहीं करता हूँ"

(गीत नं० ४२ के अन्तर्गत)

के स्वाभिमान मे उद्दीप्त है--

कवि की प्रेम भावना कही-कही किञ्चित रहस्यमयी छटा भी दरशाती है जैसा कि 'पनघट का गीत' (गीत न० ३०)। कवि की दार्शनिकता मे बोझिल गहनता नही है। निराशावादी होते हुए भी यह गीत--

"कुछ भी नहीं, कुछ भी नहीं!
मैं और मेरी शून्यता,
मैं और मेरी न्यूनता;
इसके सिवा आकाश में कुछ भी नहीं, कुछ भी नहीं!
(गीत नं० १५)

बड़ी मार्मिक रचना है।

और फिर निराशा में भी—

"लौट सबेरा फिर आयेगा।

. . . .

झुकती काली काली आँखें,
मद विह्वल मतवाली आँखें;

बन्द न कर तू चित्र खींचने मुग्ध चितेरा फिर आयेगा।"

आशा की बड़ी स्पष्ट तस्वीर है।

(गीत नं० १३)

कवि ने अपने गत जीवन पर दृष्टिपात करके दो तीन कविताओं में जागरण का बिगुल बजाने की चेष्टा की है किन्तु यह कवि के भावना जगत का क्षेत्र नहीं है। फिर भी—

"बजा-बजा फिर प्रलयङ्कर का
डमरू डिम-डिम डग-डग।

. . . . . .

गूँज उठा स्वर कालकूट का
झग-झग-झग-झग-झग झग।"

(गीत नं० १६)

भावानुकूल शब्द प्रवाह की दृष्टि से ओजमयी रचना है। देश की स्वतंत्रता की लड़ाई में क्रान्तिकारियों की सेवा और बलिदान का उल्लेख रोंगटे खड़ा कर देता है।

देखिये——

"जब समाज क्रन्दन करता है।

. . . .

"रो पड़तीं निःशब्द दिशाये,
रो पड़तीं प्रज्वलित चिताये;
तब कोई अतृप्त दीवाना शोणित का चन्दन करता है।"

(गीत नं० २४)

अथवा——

"जाने क्या होने वाला है?
आज घटा छाई काली क्यों
है समाधि गृह भी खाली क्यों
क्या कोई चिर विद्रोही उसमे आकर सोनेवाला है?

. . . . . .

क्यों जय घोष गगनवेधी है
क्यों सज्जित यह बलिवेदी है,
क्या कोई निज अरुण रक्त से इसे आज धोने वाला है?"

(गीत नं० २६)

अस्तु, समस्त कविता संग्रह में विविध मनोदशाओं के उद्गार हैं कवि का कोई निश्चित संदेश या दिशा निर्देशन नहीं है इसके लिये कवि की विकासोन्मुखी प्रतिभा को अभी और प्रौढ़ एवं परिपक्व होना है। मैं कवि के उज्ज्वल भविष्य की शुभ कामना करता हूं।——

बम्बई
२०।१२।५१

यमुना प्रसाद सिंह

अपनी बात

अपने स्नेहियों से मुझे कुछ अपनी बात भी कहनी है, और वह मैं संक्षेप मे ही कहूँगा। क्रमशः 'मजदूर जगत' 'मानव' और "मस्तिष्क की रेखायें" लेकर मैं आपके सम्मुख इसके पूर्व भी आ चुका हूँ मेरी कृतियों को आपने प्रेमपूर्वक अपनाया है केवल इसी आधार पर मैं पुनः "मेघमाला" के रूप मे आपके सम्मुख उपस्थित हो रहा हूँ। "मेघमाला" मेरे गीतों की प्रथम पुस्तक है, गत पन्द्रह वर्षों से कुछ न कुछ गुनगुनाते और लिखते रहने के कारण गीतों की लम्बी संख्या मे से कुछ गीत ही इसमे संकलित किये गये है। गीतों का यह चुनाव मैंने अपने स्मृति-चित्रों को सजीव रखने की दृष्टि से किया है, अतएव इसमे अधिकांश पुराने गीत ही है, जो पत्र पत्रिकाओं मे प्रकाशित हो चुके है, कुछ गीत मैंने राष्ट्रीय आन्दोलन-युग के भी रख दिये है, साथ ही कुछ सर्वथा नवीन अप्रकाशित गीत भी है। मुझे इसके लिये हार्दिक खेद है कि अपने स्नेहियों के बार-बार कहने पर भी इस बीच लगभग बारह वर्ष तक मैं पुस्तक-प्रकाशन कार्य की ओर से उदासीन रहा, किन्तु अब मैं अपने प्रेमी पाठकों और मित्रों को विश्वास दिलाता हूँ कि मैं यथासम्भव शीघ्र ही अपनी अन्य कृतियाँ भी उनकी सेवा मे उपस्थित करूँगा। अपने आलोचकों से मुझे कुछ भी नहीं कहना है वे "जो चाहें सो कहें" उनका यथार्थ कथन मुझे शक्ति प्रदान करता रहेगा। अपने उन साथियों से जो मेरे व्यक्ति या मेरी कविता के निकट रहे है मुझे अवश्य इतना निवेदन करना है कि वे मुझे अपनाकर, मेरी त्रुटियों की ओर स्पष्ट संकेत कर सदैव अपना अमूल्य सहयोग प्रदान करते रहें।

अन्त मे इस संग्रह के प्रकाशनार्थ आर्थिक सहयोग देने के लिये उत्तर

भारत के प्रमुख उद्योगपति श्री रामेश्वर प्रसाद बागला को मैं धन्यवाद देता हूँ।

श्री ठा० यमुना प्रसाद सिंह मेरे अग्रज भ्राता के स्वरूप में अपनी स्नेहमयी मुस्कान द्वारा सदैव मेरी विषम परिस्थितियों को विद्रोही भावनाओं से बचाते रहे हैं उनसे इस पुस्तक के सम्बन्ध में कुछ शब्द लिखवा कर मैंने उन्हें जिस संकोच एवं संकट में डाल दिया है उसके लिये मैं अब क्षमा माँगने योग्य भी नहीं हूँ।

आदरणीय श्री रमाशंकर अवस्थी ('वर्त्तमान' संचालक) ने आशीर्वाद स्वरूप परामर्श देकर, तथा श्री श्याम नारायण कपूर, और उनके छोटे भाई श्री हृदयनारायण कपूर (संचालक 'साहित्यनिकेतन') ने इस संग्रह के प्रकाशन का प्रबन्ध करके मुझे अनुगृहीत किया है।

अन्त में मैं अपने उन समस्त कृपालु मित्रों को जिन्होंने इस संग्रह के लिये आत्मीयता प्रगट की है धन्यवाद देता हूँ।

कानपुर
१।१।५२

श्यामबिहारी शुक्ल 'तरल'

सूची

१	बिखरी उदारता किसकी है ?	१७
२	यही उनकी चतुराई है ।	१८
३	एक ही क्षण माँगता हूँ !	१९
४	अरुण-अञ्चल हिल रहा है !	२०
५	मेरे पास तुम्हारा क्या है ?	२१
६	सुन्दर सुयोग तुम मेरे हो !	२२
७	मेरे मधुमय गान सजल तुम !	२३
८	आवाज न तुम सुन पाओगी !	२४
९	वर्षा की भीगी रात तुम्हारी सुधि आई	२५
१०	कुछ भी समझा न सका तुमको !	२५
११	यौवन-सुरभि वासना डोली !	२७
१२	क्या इतिहास अमर होते हैं ?	२८
१३	लौट सवेरा फिर आयेगा !	२९
१४	ये घन बरस-बरस कर हारे !	३०
१५	कुछ भी नहीं ! कुछ भी नहीं !	३१
१६	बजा-बजा फिर प्रलयङ्कर का डमरू डिम-डिम डग-डग	३२
१७	गाता आ रहा है कौन ?	३४
१८	पीड़ाओं में हार न मानी पीछे पग न हटाये !	३५
१९	ये झिलमिल झिलमिल से तारे !	३७
२०	अंधकार में दीपशिखा सी चमक रही है आशा !	३८
२१	आज नव अनुराग का वरदान दो !	३९
२२	तुम नियति की प्रेरणा हो मैं कहूँ कैसे ?	४२

२३. ये नयन सितारे है ! ४३
२४. जब समाज क्रन्दन करता है ! ४४
२५. तू पतवार चलाता चल रे ! ४५
२६. जाने क्या होने वाला है ? ४६
२७. नही, मे नही चाहता हूँ किनारा ! ४७
२८. मत पूछो मेने कवि बन कर · · · · · · ४८
२९. आओ रवि की नव किरणो मे · · · · ५१
३०. मिलते है हम तुम दोनो · · · · · · ५४
३१. पूछो मत मुझसे मेरी रामकहानी · ५८
३२. किसने कब पहचाना मुझको ? ६०
३३. किसी की टूटती सी ध्वनि ! ६१
३४. तुम आज व्यथा सुन लो मेरी · · · · · · ६२
३५. प्रति क्षण का इतिहास · · · · · · · · · ६४
३६. प्रति-ध्वनि लौट यही आती है ! ६६
३७. तुम्हें चाहिये प्रेम प्रेम से मेरा क्या नाता ? ६७
३८. पत्थर से सर मारा मैने · · · · · · · · ६८
३९. तुम मेरे गीतों के स्वर मेरे उर के उल्लास हो ! ६९
४०. पुलक पलके खुल गई यौवन सवेरा हो गया ! ७१
४१. मै वञ्चित हूँ हाँ वञ्चित उस मादकता से रानी ! ७३
४२. मै पाषाणो से प्रेम नही करता हूँ। ७६
४३. कुछ सोच समझ कर चलो यहाँ · · · · · · ७८
४४. वह एक अधूरी बात मुझे प्यारी है ! ८०
४५. मेरी पलकों में बस जाओ ! ८१
४६. सपने में देख लिया तुमको ! ८२
४७. मन मिलन माँगो न मन से ! ८३
४८. भीख क्या माँगूँ प्रणय की ! ८४

४९.	प्रेम दो प्रिय तो हृदय का दान भी दो !	८५
५०.	लेकर ज्ञान करूँगा क्या मैं ?	८६
५१.	तब मुझे अपने हृदय की ध्वनि सुनाई दी !	८७
५२.	दो क्षण के अरमान · · · · · · · · ·	८८
५३.	अंकित मेरे उर में अंकित · · · · · · · ·	८९
५४.	मत पूछो क्यों दुर्बलता को मैंने आज पुकारा ?	९०
५५.	क्यों दूर हृदय से प्यार नहीं होता है !	९२
५६.	आँखें मींच लो चुपचाप !	९४
५७.	याद मुझे अभिशाप तुम्हारा !	९५
५८.	मुझसे बेड़ा पार न होगा !	९६
५९.	आती क्षीण पुकार किसी की !	९७
६०.	जलद बरस जा !	९८
६१.	मेघ घटा घिर काली आई !	९९
६२.	ओ माली जाने क्यों तूने · · · · · · ·	१००
६३.	पूछता हूँ तुम बता दो · · · · · · · · ·	१०१
६४.	पलट पलट कर पथ में मत देखो · · · · ·	१०२
६५.	तब आ जाती है मुझको याद तुम्हारी !	१०३
६६.	जीवन शाप समझ कर पाया !	१०५
६७.	आज व्यथा पीकर बैठा हूँ !	१०६
६८.	सचमुच मैं कितना निर्बल हूँ !	१०८
६९.	तुम गाओ मैं गीत बनाऊँ	११०
७०.	मेरा जीवन कितना उदास !	१११
७१	देखो हुआ प्रभात !	११२

समर्पण

अनेक भारतीय उद्योगों के सफल संचालक

हिन्दी भाषा के अनन्य प्रेमी

कानपुर निवासी

श्रीमान् रा० ब० रामेश्वर प्रसाद बागला

को

सस्नेह, सादर, समर्पित

श्यामबिहारी शुक्ल 'तरल'

श्रीमान् रामेश्वर प्रसाद बागला

मेघमाला

मेघमाला सी
मुदित मन के लिये,
रंग शाला सी
रसिक जन के लिये;
मूक-हाला सी
प्रणय की चेतना,
प्राण, ज्वाला सी
हृदय की वेदना ;
कह सकूंगा क्या,
भला मैं कौन हूँ ?
तुम उदार बनो
सुहृद मैं मौन हूँ ।

[१]

बिखरी उदारता किसकी है ?
कुसुमों सी किरणावलियों सी ,
मधु सी मन मधुपावलियों सी ;
चञ्चल समीर चुपके-चुपके
मणियाँ बुहारता किसकी है ?
बिखरी उदारता किसकी है ?
घन-तम में छिपती छाया सी ,
कुछ आँखमिचौनी माया सी ;
अरमान चितेरा बार-बार
प्रतिछवि उतारता किसकी है ?
बिखरी उदारता किसकी है ?
नयनों की अमर-पिपासा सी
अधरामृत की अभिलाषा सी ;
मादक विह्वल सा एक स्पर्श
अलकें सुधारता किसकी है ?
बिखरी उदारता किसकी है ?

[२]

यही उनकी चतुराई है !

बढ़ा कर अभिलाषा मन की ,
अमर कर मृदु आशा मन की ;
मिटा कर परिभाषा मेरी
उन्हें मेरी सुधि आई है !
यही उनकी चतुराई है !

न मिट जाये मन की ममता ,
विषम होती जाये समता ;
शलभ को सिखला कर जलना
मिलन की ज्योति जगाई है !
यही उनकी चतुराई है !

कहानी हो जाये पूरी ,
विवश बढ़ती जाये दूरी ;
उन्होंने पथ की सीमा से
युगों की होड़ लगाई है !
यही उनकी चतुराई है !

[३]

एक ही क्षण माँगता हूँ !
पूर्ण मंगल-कामना हो ,
चेतना-मय भावना हो ;
स्नेह-सिन्धु न स्नेहजल का
एक ही कण माँगता हूँ !
एक ही क्षण माँगता हूँ !
हो व्यथा हलकी हृदय की ,
सो सके पीड़ा प्रणय की ;
आज उन अगणित प्रणों का
एक ही प्रण माँगता हूँ !
एक ही क्षण माँगता हूँ !
मेघनभ में, अतल जल है ,
बाहु बल से गति सबल है ;
कुछ न दो पर सांत्वना का
एक ही तृण माँगता हूँ !
एक ही क्षण माँगता हूँ !

[४]

अरुण अञ्चल हिल रहा है !

रजनि रस-रञ्जित रँगीली ,
नव-वधू सी नव-लजीली ;
चल पड़ी जग कर अचानक
हृदय चञ्चल हिल रहा है !
अरुण अञ्चल हिल रहा है !

अब तरंग न रुक रही है ,
तरुण तट पर झुक रही है;
हिल उठा कुछ उदधि अन्तर
सिहर कर जल हिल रहा है !
अरुण अञ्चल हिल रहा है !

प्रकृति के नव रंग लेकर ,
कुसुम कलिका संग लेकर ;
अरुणिमा छवि की लिये
रवि का दृगञ्चल हिल रहा है !
अरुण अञ्चल हिल रहा है !

[५]

मेरे पास तुम्हारा क्या है ?

दो क्षण की चञ्चलता मेरी ,
दो दिन की दुर्बलता मेरी ;
मदमाती लहरों के सम्मुख
जीवन-हीन किनारा क्या है ?
मेरे पास तुम्हारा क्या है ?

मुझे जलाती ज्वाला मेरी ,
दर्द भुलाती हाला मेरी ;
भूलों के अतिरिक्त बताओ
मेरा और सहारा क्या है ?
मेरे पास तुम्हारा क्या है ?

एक अतृप्त पिपासा मेरी ,
एक मधुर अभिलाषा मेरी ;
एक घूँट मादक मदिरा के
सम्मुख सागर खारा क्या है ?
मेरे पास तुम्हारा क्या है ?

[६]

सुन्दर सुयोग तुम मेरे हो !
तुम अमित उसाँसों के धन हो ,
कोमल भुजपाशों के धन हो ;
ओ मिलन-निशा के गीत
कामना के वियोग तुम मेरे हो !
सुन्दर सुयोग तुम मेरे हो !

तुम चपला के चञ्चल-प्रकाश ,
तुम नव-यौवन के मञ्जु-हास ;
युग-युग की सञ्चित सुधा-
सरसता के सँयोग तुम मेरे हो !
सुन्दर सुयोग तुम मेरे हो !

तुम श्रमित-तरंगों के प्रवाह ,
तुम आशाओं के अम्बुवाह ;
ओ चातक के सन्तोष-
स्वाँति अनुराग रोग तुम मेरे हो !
सुन्दर सुयोग तुम मेरे हो !

[७]

मेरे मधुमय गान सजल तुम !

तुम निशीथ के करुण राग हो ,
राका रजनी के सुहाग हो ;
अभिलाषा के धन अधीर
नव-यौवन के अरमान सजल तुम !
मेरे मधुमय गान सजल तुम !

तुम दो हृदयों के कम्पन हो ,
तुम कोमल आशा के धन हो ;
नवल-प्रिया के मान हठीले-
मिलनातुर अभिमान सजल तुम !
मेरे मधुमय गान सजल तुम !

तुम सँयोग के आलिंगन हो ,
तुम तन्मयता के चुम्बन हो ;
मदमाते अपलक नयनों के
ओ मादक वरदान सजल तुम !
मेरे मधुमय गान सजल तुम !

[८]

आवाज न तुम सुन पाओगी !

पथ में ऊँची दीवारें हैं,
मेरी कुछ क्षीण पुकारें हैं;
तुम छाया सी छवि की
मेरी पलकों में लुक छिप जाओगी !
आवाज न तुम सुन पाओगी !

अज्ञात प्रणय की दूरी है,
कितनी अतृप्त मजबूरी है;
तुम मेरे शब्दों में मेरा ही,
स्वर बन कर लहराओगी !
आवाज न तुम सुन पाओगी !

घन सघन श्याम घिर आये हैं,
छवि के विराम फिर आये हैं;
तुम आँसू बनने को मेरे-
अन्तर में आग लगाओगी !
आवाज न तुम सुन पाओगी !

[६]

वर्षा की भीगी रात तुम्हारी सुधि आई !

नयनों से पुलक प्रवाह छलकता जाता ,
बरबस लज्जा का भाव झलकता जाता ;
दुख से पीली बरसात
तुम्हारी सुधि आई !

वर्षा की भीगी रात तुम्हारी सुधि आई !

लहरों का स्वर संगीत भरा अलकों में ,
रिमझिम रिमझिम का राग भरा पलकों में ;
ओ चपल लजीली बात
तुम्हारी सुधि आई !

वर्षा की भीगी रात तुम्हारी सुधि आई !

कलिका के कलित कपोल ओस से गीले ,
लतिका के मधुरिम बोल दृवित गरबीले
बीते सँयोग के प्रात
तुम्हारी सुधि आई !

वर्षा की भीगी रात तुम्हारी सुधि आई !

[१०]

कुछ भी समझा न सका तुमको !

अन्तर-पीड़ा को व्यक्त किया ,
दुख में जीवन अनुरक्त किया ;
स्वर काँप गया गति-हीन हुआ
मैं गीत सुना न सका तुमको !
कुछ भी समझा न सका तुमको !

कुछ क्रूर-प्रहारों ने रोका ,
कुछ क्षुद्र विचारों ने रोका ;
कुछ बढ़ा किन्तु फिर लौट चला
पाकर भी पा न सका तुमको !
कुछ भी समझा न सका तुमको !

नौका प्रवाह में लीन हुई ,
आशा पतवार विहीन हुई ;
साहस छूटा दिल टूट गया
मैं पार लगा न सका तुमको !
कुछ भी समझा न सका तुमको !

[११]

यौवन-मुग्ध बासना डोली !
विकसित हुईं कुसुम की कलियाँ ,
बिहँस उठीं मणि मुक्तावलियाँ ;
झूम उठी लज्जानत डाली
मधुप लगे करने रँगरलियाँ ,
विरह विदग्ध काँपते स्वर से 'कुहू-कुहू' पिक बोली !
यौवन-मुग्ध बासना डोली !
तरुतन से गुम्फित लतिकायें ,
रंग भरी सी सकल दिशायें ;
मिलनातुर सौरभ समीर से
मिलनातुर कुसुमित कलिकायें ;
मधु पराग चुम्बन को आई मधुपजनों की टोली !
यौवन-मुग्ध बासना डोली !
चले पवन के मन्द झकोरे ,
चले मान के मधुर निहोरे ;
नव-प्रभात में नव-किरणों ने
डाल दिये जग पर छवि डोरे ;
यौवन लुटा प्रकृति मुस्काई भरी कामना झोली !
यौवन-मुग्ध बासना डोली !

[१२]

क्या इतिहास अमर होते हैं ?

पूछो अगणित धूल कणों से ,
पूछो इन रवि की किरणों से ;
अन्तरिक्ष से पूछो किस उर के उल्लास अमर होते हैं !
क्या इतिहास अमर होते हैं ?

पूछो इस जलती ज्वाला से ,
पूछो इस तारक माला से ;
अट्टहास से पूछो किसके हास विलास अमर होते हैं !
क्या इतिहास अमर होते हैं ?

पूछो हिमगिरि के शिखरों से ,
पूछो इन कमनीय करों से ;
सागर से पूछो क्या महलों के विश्वास अमर होते हैं !
क्या इतिहास अमर होते हैं ?

[१३]

लौट सबेरा फिर आयेगा !

नव यौवन कलिका को देने ,
मधु, पराग, चुम्बन रस लेने;
मदमाती भ्रमरावलियों में
प्रियतम तेरा फिर आयेगा !
लौट सबेरा फिर आयेगा !

सुख सपनों को सत्य बनाने ,
जग को मीठी तान सुनाने ;
अन्तरिक्ष को छू कर लहराता
स्वर मेरा फिर आयेगा !
लौट सबेरा फिर आयेगा !

झुकती काली-काली आँखें ,
मद-विह्वल मतवाली आँखें ;
बन्द न कर तू चित्र खींचने
मुग्ध-चितेरा फिर आयेगा !
लौट सबेरा फिर आयेगा !

[१४]

ये घन बरस-बरस कर हारे !

सरिता, सर, सरसिज मृदु दल पर ,
जल थल पर गिरि के अञ्चल पर ;
प्यास न बुझी व्यथित चातक के
प्यासे प्राण पुकारे !
ये घन बरस-बरस कर हारे !

नभ-मण्डल में छहर-छहर कर,
कुछ घिर-घिर कुछ घहर-घहर कर,
बूँद बने बह गये धार में
पहुँच न सके किनारे !
ये घन बरस-बरस कर हारे !

बने सजल सरिता की 'कल-कल',
रहे चूमते गिरि का अञ्चल ;
आह ! न बन पाये उन दो
नयनों के दो कण खारे !
ये घन बरस-बरस कर हारे !

[१५]

कुछ भी नहीं ! कुछ भी नहीं !
मैं और मेरी शून्यता ,
मैं और मेरी न्यूनता ;
इसके सिवा आकाश में
कुछ भी नहीं ! कुछ भी नहीं !
मैं और मेरी हार है ,
मैं और मेरा भार है ;
इसके सिवा निश्वास में
कुछ भी नहीं ! कुछ भी नहीं !
इस ओर दुखद अशान्ति है ,
उस ओर मेरी भ्रान्ति है ;
इसके सिवा विश्वास में
कुछ भी नहीं ! कुछ भी नहीं !

[१६]

बजी-बजी फिर प्रलयङ्कर की
डमरू 'डिम-डिम डग-डग' !
हिली-हिली हिल उठी धरित्री
डगमग डगमग डगमग !

धू-धू कर धधकी फिर ज्वाला ,
तड़क उठी मुंडों की माला ;
उधर-उधर देखो सागर में
उफनाई फिर विप्लव-हाला ;

खुला तीसरा नेत्र रुद्र का
'जगमग जगमग जगमग' !
बजी-बजी फिर प्रलयङ्कर की
डमरू 'डिम-डिम डग-डग' !

नाचे हाँ शिव शंकर नाचे ,
झूम-झूम प्रलयङ्कर नाचे ;
'फू-फू' कर फुंकारे विषधर
नाचे भूत भयङ्कर नाचे ;

बजा मृदंग आज भैरव का
'धाकिट धग-धग धग-धग' !
बजी-बजी फिर प्रलयङ्कर की
डमरू 'डिम-डिम डग-डग' !

हुए धूल गिरि आवर्तन से,
गिरे शृंग युग परिवर्तन से;
काँप उठीं निःशब्द दिशायें,
इस प्रचण्ड ताण्डव नर्तन से;
गूँज उठा स्वर कालकूट का
'झग-झग झग-झग झग-झग'!
बजी-बजी फिर प्रलयङ्कर की
डमरू 'डिम-डिम डग-डग'!

[१७]

गाता आ रहा है कौन ?

सिसकियों का करुण गाना ,
छेड़ आहों का तराना ;
आज पथ पर डगमगाता आ रहा है कौन ?
गाता आ रहा है कौन ?

रो रहीं नीरव दिशायें ,
रो रहीं जलती चितायें ;
धूम्र बन कर मुस्कराता आ रहा है कौन ?
गाता आ रहा है कौन ?

गूँजती झंकार नभ में ,
गूँजता हुंकार नभ में ;
जागरण, वीणा बजाता आ रहा है कौन ?
गाता आ रहा है कौन ?

[१८]

पीड़ाओं से हार न मानी
पीछे पग न हटाये !
तूफ़ानों को भी मैंने
तूफ़ानी गीत सुनाये !
सुख में हँसे न दुख में रोकर
छलकाये दृग-प्याले ,
रोक न पाये मेरी गति
मेरे पैरों के छाले;
जीवन में विद्रोह जगाकर
गीत क्रान्ति के गाये !
तूफ़ानों को भी मैंने
तूफ़ानी गीत सुनाये !
मुझे दर्द ने शीतलता दी
पीड़ाओं ने छाया ,
आहों ने मेरे अन्तर में
आशा - दीप जलाया ;
मेरे लिये परीक्षा बन कर
यौवन के क्षण आये !
तूफ़ानों को भी मैंने
तूफ़ानी गीत सुनाये !

लहरों ने मुझको दिखला दी
मेरी जीवन-धारा,
अगम उदधि के उर अथाह ने
मुझको आज पुकारा;
मेरे गीत पवन में उड़ कर
अमर बने लहराये!
तूफ़ानों को भी मैंने
तूफ़ानी गीत सुनाये!

[१६]

ये झिलमिल-झिलमिल से तारे !
घूम रहे हैं मन्द चाल से,
हैं बिखरे मुक्ता प्रवाल से,
मानों कण सिन्दूर झलकते
रजनि-वधू के शुभ्र-भाल से ;
नभ-प्राङ्गण में दहक रहे हैं या जलते अंगारे !
ये झिलमिल-झिलमिल से तारे !
किसी वीर के अगणित प्रण हैं,
या स्वर्णिम सँयोग के क्षण हैं ;
या असफल चिर-विद्रोही के
रक्त भरे आँसू के कण हैं ;
या कि व्योम में दमक रहे हैं इन्कलाब के नारे !
ये झिलमिल-झिलमिल से तारे !
मदन-मुग्ध-शर ये चलते हैं
या कि स्वर्ण मुद्रा ढलते हैं ;
अमर शहीदों की सुस्मृति में
या असंख्य दीपक जलते हैं ;
चमक रहे हैं या कि रजतकण सुरसरि-व्योम किनारे !
ये झिलमिल-झिलमिल से तारे !

[२०]

अंधकार में दीप-शिखा सी
चमक रही है आशा !
इस आशा में उलझ गई है
नव-युग की अभिलाषा !
विद्युछटा बन सघन घटा से-
यह टकरा जाती है,
ऊषा की रंगीन रूप किरणों
में छा जाती है;
परवानों को रूप राशि की
झलक दिखा जाती है,
दीवाली सी सजी बजी
सपनों में आ जाती है;
जल-जल कर उज्ज्वल करती है
सत्य स्नेह-परिभाषा !
अंधकार में दीप-शिखा सी
चमक रही है आशा !
यह झंझानिल के झोंकों पर
बल खाती रहती है,
ज्वाला सी अनुभूति व्यक्त कर
इठलाती रहती है;

एकाकिनी न जाने क्या
गुन-गुन गाती रहती है,
तम-अवगुंठन त्याग
ज्योति-कण बिखराती रहती है;
मुखरित करती रहती है
यह मन-मधुपों की भाषा !
अंधकार में दीप-शिखा सी
चमक रही है आशा !
यह दिनकर के वक्ष-स्थल में
छिप कर सो जाती है,
बेसुध सी होकर
प्रकाश की छवि में खो जाती है;
नव प्रभात में मृदुल-हास से
विकसित हो जाती है,
जीवन लतिका में प्रिय
सुरभित सुमन पिरो जाती है;
इसका हृदय स्नेह का सागर
पर सनेह का प्यासा !
अंधकार में दीप-शिखा सी
चमक रही है आशा !

[२१]

आज नव-अनुराग का—
वरदान दो प्रिय कामना को !
प्राण में अनुभूति है
अधिकार में अपवाद भी है,
भूल में अपनी विवशता
याद में उन्माद भी है;
आज अपने रूप की
पहचान दो आराधना को !
आज नव-अनुराग का
वरदान दो प्रिय कामना को !

स्वप्न में है सत्य की झाँकी,
रुदन में हास भी है;
है प्रतीक्षा में मिलन
निश्वास में विश्वास भी है;
आज मधु से सींच दो
मुस्कान दो प्रिय साधना को !
आज नव-अनुराग का
वरदान दो प्रिय कामना को !

है नया जीवन नयी धारा ,
नया संसार भी है ,
आज साहस है उमंगों में-
मचलता प्यार भी है;
ज्ञान की सीमा, हृदय का
दान दो प्रिय भावना को !
आज नव-अनुराग का
वरदान दो प्रिय कामना को !

[२२]

तुम नियति की प्रेरणा हो मैं कहूँ कैसे ?
जानता हूँ तुम मधुर पर वेदनामय हो ,
जानता हूँ तुम किसीके गीत की लय हो ;
जानता हूँ तुम तरंगित वायु सी चञ्चल ,
आज इसकी, कल किसीके, युद्ध की जय हो ;
मैं अशक्य भला तुम्हारा पथ गहूँ कैसे ?
तुम नियति की प्रेरणा हो मैं कहूँ कैसे ?
अश्रुओं की धार में देखा तुम्हें मैंने ,
और मञ्जुल-प्यार में देखा तुम्हें मैंने ;
क्या कहूँ कैसे किसीकी जीत में देखा ,
आज अपनी हार में देखा तुम्हें मैंने ;
मैं निकट हो कर तुम्हारे स्थिर रहूँ कैसे ?
तुम नियति की प्रेरणा हो मैं कहूँ कैसे ?
तुम किन्हीं भावुक जनों की नीति चंचल हो,
तुम किसी प्रेमी हृदय की मूक हलचल हो;
तुम किसी स्वच्छन्द सरिता के तट-स्थल पर ,
गूँजने वाली मधुर-ध्वनि मञ्जु कल-कल हो;
मैं तुम्हारे साथ लहरों में बहूँ कैसे ?
तुम नियति की प्रेरणा हो मैं कहूँ कैसे ?

[२३]

ये नयन सितारे हैं !

झिलमिल झिलमिल सी एक झलक ,
मादक मदिरा सी रही छलक ;
उफ़ जलती आँखों में ,
ये जलते से अंगारे हैं !
ये नयन सितारे हैं !

कुछ धूप छाँह की सी छाया ,
कुछ चमक दमकती सी माया ,
उन पलक-पुतलियों में
छिपते अरमान तुम्हारे हैं !
ये नयन सितारे हैं !

जगमग जगमग अरमानों से ,
लहराते मीठी तानों से ;
स्वर्ण-स्मृतियों के चिह्न
स्वप्न से अधिक हमारे हैं !
ये नयन सितारे हैं !

[२४]

जब समाज क्रन्दन करता है !

जब दुख भार अधिक बढ़ जाता ,
जब चीत्कार अधिक बढ़ जाता,
तब कोई विप्लवकारी
विप्लव का अभिनन्दन करता है !
जब समाज क्रन्दन करता है !

चलते हैं झंझा के झोंके ,
रुकते नहीं किसीके रोके;
जब निष्क्रिय समाज क्रन्दन से
प्राप्त नया स्पन्दन करता है !
जब समाज क्रन्दन करता है !

रो पड़तीं निःशब्द दिशायें ,
रो पड़तीं प्रज्वलित चितायें;
तब कोई अतृप्त दीवाना
शोणित का चन्दन करता है !
जब समाज क्रन्दन करता है !

[२५]

तू पतवार चलाता चल रे !

घन गरजे या बरसे पानी,
आती हो आँधी तूफ़ानी;
तू अपने प्राणों का दीपक
अपने आप जलाता चल रे !
तू पतवार चलाता चल रे !

जीवन है इस जीत हार में,
जीवन है इस मध्य धार में;
इस परिवर्तन से तू अपना
दुखता दिल बहलाता चल रे !
तू पतवार चलाता चल रे !

यह चञ्चल लहरों की काया,
नभ में सघन मेघ की छाया,
इस कम्पित नौका को नाविक
तू उस पार लगाता चल रे !
तू पतवार चलाता चल रे !

[२६]

जाने क्या होने वाला है ?

आज घटा छाई काली क्यों,
है समाधिगृह भी खाली क्यों,
क्या कोई चिर-विद्रोही
उसमें आकर सोने वाला है ?
जाने क्या होने वाला है ?

नीरवता कैसी उपवन में,
क्यों विषाद छाया है मन में;
अमर शहीदों की समाधि पर
क्या कोई रोने वाला है ?
जाने क्या होने वाला है ?

क्यों जयघोष गगन वेधी है,
क्यों सज्जित यह वलिवेदी है;
क्या कोई निज अरुण रक्त से
उसे आज धोने वाला है ?
जाने क्या होने वाला है ?

[२७]

नहीं, मैं नहीं चाहता हूँ किनारा !

मुझे देख छिपने लगी हैं दिशायें,
मुझे देख हँसने लगीं आपदायें;
मुझे दो न झूठी दया का सहारा !
नहीं, मैं नहीं चाहता हूँ किनारा !

हहरती हुई वायु भी साथ देगी,
घहरती घटा भी बढ़ा हाथ देगी;
मुझे आज तूफ़ान ने है पुकारा !
नहीं, मैं नहीं चाहता हूँ किनारा !

अगम सिंधु में यह लहर छोड़ देगी,
गये टूट जो तार वे जोड़ देगी;
मुझे चाहिये एक गति, एक धारा !
नहीं, मैं नहीं चाहता हूँ किनारा !

[२८]

मत पूछो, मैंने कवि बन कर
जीवन में क्या-क्या देखा है ?
मैंने देखा है महलों को
अपना उन्नत शीश उठाये,
मैंने पथ के धूल कणों को
देखा निज इतिहास छिपाये;
मैंने उनको भी देखा जो -
आँखों में जलते रहते हैं,
मैंने उनको भी देखा
जो रहते अपना शीश झुकाये;
मैंने महाशक्ति को क्षण में
बनते दुर्बलता देखा है !
मत पूछो मैंने कवि बन कर
जीवन में क्या-क्या देखा है !
चमक-चमक कर छिप-छिप जाते,
मैंने प्रतिक्षण को देखा है,
बन-बन कर फिर मिट-मिट जाते
मैंने प्रति कण को देखा है,
बार-बार बुझ-बझ कर फिर-फिर
जलती देखी मैंने ज्वाला,

ज्वाला में जलने को प्रस्तुत
मैंने प्रति तृण को देखा है;

मानव का अभिमान चिता में
धू-धू कर जलता देखा है!
मत पूछो मैंने कवि बन कर
जीवन में क्या-क्या देखा है!

कभी-कभी मैंने वैभव को
भी व्याकुल होते देखा है,
अपनी सीमा में घुट-घुट कर
उसे प्राण खोते देखा है;

सावधान हो कर देखी हैं
जब मैंने ऊँची मीनारें,
तब उनकी जड़ में विनाश को भी
मैंने सोते देखा है;

मैंने इन अपनी आँखों से
लौह-चक्र चलता देखा है!
मत पूछो मैंने कवि बन कर
जीवन में क्या-क्या देखा है!

सुन्दरियों को अपनी सुन्दरता
पर इठलाते देखा है
अगणित दीवानों को
उनकी पद ठोकर खाते देखा है;
यौवन की मादकता देखी
फिर जीवन का फूटा प्याला,
कितनी ही कलियों को मैंने
खिल कर मुरझाते देखा है,
फिर प्रभात आने पर मैंने
हँसता फूल नया देखा है !
मत पूछो मैंने कवि बन कर
जीवन में क्या-क्या देखा है !

[२६]

आओ, रवि की नव किरणों में
घन-तम का अवगुंठन उतार!
मेरी आशा की ज्योति बनो
झाँको जीवन में बार-बार!

बिखरो प्रकाश की रेखा सी
उज्ज्वल कर दो मेरा अतीत,
कण-कण में रंग भरो, भर दो
आकुल-अन्तर में अमर-गीत;

मैं धीरे-धीरे भूल चलूँ
अपनेपन की परिभाषा को
तुम अभिलाषा बन कर आओ,
मेरे जीवन के क्षण पुनीत;

युग-युग की मरु-आकुलता से
सूखी जीवन की क्षीण धार!
तुम मेरी आशा ज्योति बनो
झाँको जीवन में बार-बार!

तुम विद्युच्छटा बन कर चमको,
बरसो बन कर घन सघन श्याम;
तुम उमड़ पड़ो जलधारा सी
अविरल तज कर गति का विराम;
तुम कोयल बन कर कूक उठो,
झुक झूम उठो वन कर उमंग,
तुम बिखर पड़ो वन-उपवन में
ले कर निज छवि नयनाभिराम;
तुम इस उजड़े उर उपवन में
आओ ले कर हँसती बहार!
मेरी आशा की ज्योति बनो
झाँको जीवन में बार-बार!
आओ, नूपुर की ध्वनि बन कर
कर लो तन को मन में विलीन,
कर परश कृतार्थ करो मुझको
कर दो मुझको सीमा-विहीन;
मेरी पलकों में छिप जाओ,
अपनी प्रतिछवि की छाया सी,

सपनों में मिल जाओ बनकर
अन्तर की अभिलाषा नवीन;
मैं सारा जग भूलूँ, भूलूँ
अपने जीवन की जीत-हार!
तुम मेरी आशा ज्योति बनो
झाँको जीवन में बार-बार!

[३०]

मिलते हैं हम तुम दोनों
जाने कब से इस तट पर !
साथ-साथ चलते हैं
जल भरने जग के पनघट पर !

किन्तु न तुमने मुझे और-
मैंने न तुम्हें पहचाना,
लगा हुआ बरसों से है
हम सब का आना जाना;

तुम अपने पथ पर आते
हम अपने पथ पर आते,
एक नियति के बन्धन में बँध
दो क्षण को मिल जाते;

दो क्षण का ओ सुमुखि अरी
केवल दो क्षण का मेला,
उसके बाद रहूँगा तट पर
मैं ही निपट अकेला;

युग-युग से मैं देख रहा हूँ
दुनियाँ आनी जानी,

कह न सका फिर भी मैं तुमसे
अपनी राम-कहानी;
लड़ता रहा परस्पर जीवन भर
मिट्टी के घट पर !
मिलते हैं हम तुम दोनों
जाने कब से इस तट पर !
मैं तट पर आता था, प्यासी—
आँखों में जल भरने,
तुम आती थीं मेरे जीवन–
की गति चञ्चल करने;
कभी-कभी तुम भर देती थीं
दृग प्यालों में हाला,
मुझे दीख पड़ता था
अपना जीवन जगत निराला;
तुम क्षण भर को कर जाती थीं
ऐसी कौतुक क्रीड़ा,
मुझे व्यथित करती रहती थी
मेरी अन्तर-पीड़ा;
रोम-रोम में श्वास-श्वास में
पुलकित स्नेह छिपाये

मैं बैठा रहता था पथ में
आकुल दृष्टि बिछाये;
मेरे दृग फिसला करते थे
स्निग्ध केश की लट पर !
इसी भाँति मिल जाते थे
हम तुम दोनों इस तट पर !

प्रथम बार जब तुम्हें सुमुखि–
था इस पनघट पर देखा,
तब से मेरे अन्तर्पट पर
खिंची अमिट सी रेखा;

अरे छलकता घट, लचकीला तन
नूपुर की रुन-झुन,
मैं फेंका करता था पथ से
तीक्ष्ण कंकड़ी चुन-चुन;

फिर कुछ दिन मैं था, पनघट था
और तुम्हारी बातें,
इसी भाँति रो-रोकर बीतीं
जाने कितनी रातें;
शून्य गगन में जाकर
मेरी निश्वासें टकराईं,

सुमुखि उन्हीं को सुनकर
क्या तुम इस पनघट पर आई;
क्षण भर रुको मधुर छवि
अंकित कर लूँ अन्तर-पटपर
फिर जानें कब मिलें पुनः
हम तुम दोनों इस तट पर !

[३१]

पूछो मत मुझसे मेरी राम कहानी !
मैं हूँ पगतल में पड़ा हुआ लघु-तिनका,
जिसका नवीन अस्तित्व अभी दो दिन का;
झंझा के झोंके मुझे झुलाते रहते
पथ सदा बदलता रहता है जीवन का;
तूफ़ानों से है मेरी प्रीति पुरानी !
पूछो मत मुझसे मेरी राम कहानी !
मैं वह पीड़ा जो सुधा पिलाती रहती
वह उत्कंठा जो हृदय हिलाती रहती;
मैं वह आशा जो है अपूर्ण अपने में
वह अभिलाषा जो याद दिलाती रहती;
मैं नव-यौवन की भूल भरी नादानी !
पूछो मत मुझसे मेरी राम कहानी !
मैं वह वियोग जो सुख सँयोग को भूला,
मैं वह रोगी जो प्रणय-रोग को भूला,
मैं वह उन्माद पला जो कटुता पीकर
मैं वह विरक्त जो भक्ति भोग को भूला;
मैं वह प्यासा जो भरे दृगों में पानी ।
पूछो मत मुझसे मेरी राम कहानी !

मैं एक दाग़ हूँ पिछली सुस्मृतियों का,
मैं मूक भाव हूँ मूक कला-कृतियों का;
मैं हूँ भग्नावशेष गत इतिहासों का
मैं जटिल अर्थ हूँ युग-युग की श्रुतियों का ;
मैं लघु दीपक की जलती हुई जवानी !
पूछो मत मुझसे मेरी राम कहानी !

[३२]

किसने कब पहचाना मुझको !

अपनी भूल समझ कब पाया,
जग प्रतिकूल समझ कब पाया;
मैंने जब अपनापन समझा
जग समझा दीवाना मुझको !
किसने कब पहचाना मुझको !

मेरी जीत हार थी जग की,
मेरा दुख बहार थी जग की;
अब भी छेड़ दिया करता है
जग दे-देकर ताना मुझको !
किसने कब पहचाना मुझको !

बैठ गया ढलती छाया में,
उलझ गया मिटती काया में;
कितना और पड़ेगा जाने
जीवन-भार उठाना मुझको !
किसने कब पहचाना मुझको !

[३३]

किसी की टूटती सी ध्वनि !

व्यथा से तिलमिलाती सी,
अनल सी झिलमिलाती सी;
किसी की भावनाओं को
किसी की लूटती सी ध्वनि !
किसी की टूटती सी ध्वनि !

घहरती सी घुमड़ती सी,
हहरती सी उमड़ती सी,
चतुर्दिक गूँजती आई
हृदय में फूटती सी ध्वनि !
किसी की टूटती सी ध्वनि !

छिपाये आह अन्तर में,
छिपाये दाह अन्तर में,
कलेजे पर व्यथाओं की
शिलायें कूटती सी ध्वनि !
किसी की टूटती सी ध्वनि !

[३४]

तुम आज व्यथा सुन लो मेरी
कल सम्भव है मैं कह न सकूँ !
मैं आज यहाँ हूँ किसी भाँति,
है किन्तु अनिश्चित कल मेरा,
विश्वास करो है अंधकार में
छिपा हुआ प्रतिपल मेरा;
यों आज यहाँ कल-कल ध्वनि में
मेरी अन्तर्ध्वनि है विलीन,
पर ज्ञात नहीं चञ्चल-समीर
कब दे उघार अञ्चल मेरा;
मैं हो जाऊँ नभ में अदृश्य
या साथ तुम्हारे रह न सकूँ !
तुम आज व्यथा सुन लो मेरी
कल सम्भव है मैं कह न सकूँ !
करना है मुझको उदधि पार
उत्ताल तरंगों पर चलकर,
संतोष हृदय को देना है
उन्मत्त-उमंगों को छलकर;

मिट्टी के कण-कण में मिल कर
बनना है मुझको नया पात्र
करना है फिर पाषाण हृदय
पाषाण-शिलाओं में ढल कर,
फिर यह डर भी है कुम्भकार का
कर प्रहार मैं सह न सकूँ !
तुम आज व्यथा सुन लो मेरी
कल सम्भव है मैं कह न सकूँ !

जाने किस भाँति यहाँ तक मैं
आया पथ में गिरता पड़ता,
उस पार ले गया नौका भी
जल-चक्रों से लड़ता-लड़ता !
अब तो पग मैं जब धरता हूँ
जब होता यात्रा का विचार
सन्देह उठा निज बाहुपाश
आकर मेरे पथ में गड़ता;
कैसे कह दूँ डर है मुझको
मैं इस प्रवाह में बह न सकूँ !
तुम आज व्यथा सुन लो मेरी
कल सम्भव है मैं कह न सकूँ !

[३५]

प्रति क्षण का इतिहास
हमारे प्रति क्षण का इतिहास !
कुछ दिन वे क्षण भी चमके
जो आज पड़ गये काले,
वे भी क्षण आये जीवन में
जो न जा सके टाले;
हँसते क्षण संयोग के आये,
क्षण वियोग के रोते,
सुख दुख के अगणित क्षण
पृष्ठों पर अंकित कर डाले,
अब तो मौन लेखनी मेरी
मेरा मौन--उदास !
प्रति क्षण का इतिहास
हमारे प्रति क्षण का इतिहास !
शैशव के वे मधुर-मधुर क्षण
डगमग-डगमग चलते
यौवन के मादक क्षण आये
दीप-शिखा से जलते;
पाने के क्षण उत्सुक से
खोने के क्षण अति विह्वल,

आने के क्षण अरुणोदय से
जाने के क्षण ढलते;
दूर-दूर सुस्मृतियों के क्षण
पीड़ाओं के पास !
प्रति क्षण का इतिहास
हमारे प्रति क्षण का इतिहास !

क्षण भर नहीं भूलतीं प्रिय,
वे सुखद क्षणों की बातें,
अपलक नयनों में बसकर
रह जातीं काली रातें;
प्रतिक्षण की है अलग-
अलग अपनी-अपनी परिभाषा
प्रतिक्षण का संघर्ष
और उनकी घातें प्रति घातें;
क्षण भर को जीवन में मिलता
क्षण भर का उल्लास !
प्रति क्षण का इतिहास
हमारे प्रति क्षण का इतिहास !

[३६]

प्रति-ध्वनि लौट यहीं आती है !

मैं कहता हूँ मैं रोता हूँ,
नभ कहता चुप मैं रोता हूँ,
मेरी अन्तर्ध्वनि नभ के
क्रन्दन से जाकर टकराती है !
प्रति-ध्वनि लौट यहीं आती है!

मैं कहता हूँ मैं सूना हूँ,
नभ कहता चुप मैं सूना हूँ;
विकल-शून्यता मेरी
नभ को भी सूना-सूना पाती है !
प्रति-ध्वनि लौट यहीं आती है !

मैं कहता हूँ मैं निर्बल हूँ,
नभ कहता चुप मैं निर्बल हूँ;
मेरे नयन अश्रु भर लाते—
नभ से ओस बरस जाती है !
प्रति-ध्वनि लौट यहीं आती है !

[३७]

तुम्हें चाहिये प्रेम, प्रेम से मेरा क्या नाता !
मैं तो हूँ गृहहीन,
विरागी, असफल संसारी,
आज यहाँ, कल कहीं
पथिक मैं हूँ स्वेच्छाचारी;
तुम सुख के सर्वस्व और मैं दुख का निर्माता !
तुम्हें चाहिये प्रेम, प्रेम से मेरा क्या नाता !
अंधकार का प्रेमालिंगन
तरुवर की छाया,
नीरवता के मूक रुदन से
खिंच कर मैं आया,
कल प्रभात होते चल दूंगा अलख गीत गाता !
तुम्हें चाहिये प्रेम, प्रेम से मेरा क्या नाता !
'दूर-दूर' कह दूर हो गया
मुझ से जग सारा,
आज उपेक्षित हो कर मैंने
पाया पथ प्यारा,
मैं अपने पथ के कण-कण में अपनापन पाता !
तुम्हें चाहिये प्रेम, प्रेम से मेरा क्या नाता !

[३८]

पत्थर से सर मारा मैंने पत्थर से सर मारा !
पहले पूजन किया प्यार से,
फिर आराधन किया हार से;
इसे शीश पर रक्खा जब,
तब शीश झुक गया अधिक भार से;
मस्तक से हो चली प्रवाहित अरुण रक्त की धारा !
पत्थर से सर मारा मैंने पत्थर से सर मारा !
चुन-चुन सुरभित सुमन चढ़ाये,
सरस स्नेह के गीत सुनाये;
गाते-गाते कण्ठ थक गया,
स्वेद छुटा लोचन भर आये;
पर सचेत हो देखा मुझ पर हँसता था जग सारा !
पत्थर से सर मारा मैंने पत्थर से सर मारा !
हो कर सावधान जब देखा,
खिंची मूर्ति पर रक्तिम रेखा;
कितने ही पागल पुजारियों
का उस पर अंकित था लेखा;
शीश पटक पाषाण मूर्ति पर हो कर व्यथित पुकारा !
पत्थर से सर मारा मैंने पत्थर से सर मारा !

[३६]

तुम मेरे गीतों के स्वर
मेरे उर के उल्लास हो !
माना तन से दूर किन्तु तुम
मेरे मन के पास हो !

तुम मेरी आशा में मेरी-
अभिलाषा के साथ हो,
तुम मेरी अनुभूति और
मेरी भाषा के साथ हो ;
तुम मेरे संगीत मधुर
मेरे अधरों के हास हो !
माना तन से दूर किन्तु तुम
मेरे मन के पास हो !

मेरे पैर तुम्हारे ही संकेतों
के आधीन हैं,
मेरे नयन तुम्हारे ही
सुमधुर सपनों में लीन हैं;
तुम मेरी अनुराग साधना
के अटूट विश्वास हो।
माना तन से दूर किन्तु तुम
मेरे मन के पास हो !

तुम मेरी जीवन वीणा की-
लय के झंकृत तार हो,
तुम मेरी कृति और कल्पना
के सजीव शृंगार हो;
मेरी साँसों के संचालक-
तुम अनन्त आकाश हो !
माना तन से दूर, किन्तु तुम
मेरे मन के पास हो !

[४०]

पुलक पलकें खुल गईं
यौवन-सबेरा हो गया !
अंग अलसित तन शिथिल
मन में भरी अभिलाष,
मद भरे बाचाल नयनों
से छलकती प्यास;
दृष्टि फेरो, दृष्टि से ओझल
अँधेरा हो गया !
पुलक पलकें खुल गईं
यौवन सबेरा हो गया !
चल पड़ी कुछ ओस मिस
रोती रँगीली रात,
कह चली कुछ कानमें
चुप-चुप लजीली बात;
रूप किरणें देख-
जग-जीवन लुटेरा हो गया !
पुलक पलकें खुल गईं
यौवन सबेरा हो गया !

मृदु कपोलों पर मिलन का
प्रण लिये अनुराग,
अरुण अधरों पर अचञ्चल
कामना का दाग़;
देख छवि चित्रित स्वयम्
बेसुध चितेरा हो गया!
पुलक पलकें खुल गईं
यौवन सबेरा हो गया!

[४१]

मैं वञ्चित हूँ, हाँ वञ्चित
उस मादकता से रानी !
जिसे पान कर बन जाती है
यह दुनिया दीवानी !

मैंने तो सीखा है अपने को
अपने में खोना,
सीखा अपनी अश्रुधार से
अपना अन्तर धोना;
सीख न पाया हँसने वालों से
क्षण भर का हँसना
पर रोने वालों से सीखा
बिलख-बिलख कर रोना;

तुम मुझको पागल समझो
अथवा समझो अभिमानी !
पर मैं अब तक वञ्चित हूँ
उस मादकता से रानी !

पीने को तो पी मैंने भी
तीव्र वेदना-हाला,
ख़ाली कर डाला है
पीकर अपना जीवन-प्याला;
यह मत पूछो, हँस-हँस पी है-
या पी है रो-रो कर,
बस इतना परिचय मेरा है
मैं हूँ पीने वाला;
तुम मुझको असमर्थ कहो-
अथवा कह लो अज्ञानी!
पर मैं सचमुच वञ्चित हूँ,
उस मादकता से रानी!
मैं पहले दुर्भाग्य-शिलाओं
से जाकर टकराया,
फिर उन्मत्त जगत ने मुझको
पैरों से ठुकराया;
किसी भाँति अपने अन्तर में
दारुण व्यथा छिपाये,

इन अन्तिम घड़ियों में प्रेयसि !
तव चरणों में आया;
अब क्षण भर रुक कर तुम सुन लो
मेरी करुण कहानी !
मैं युग-युग से वञ्चित हूं
उस मादकता से रानी !

[४२]

मैं पाषाणों से प्रेम नहीं करता हूँ !

क्यों इनके चरणों में जग झुक जाता है ,
क्यों प्रगतिशील युग का पग रुक जाता है;
इनकी कठोरता से टकरा-टकरा कर
अगणित धाराओं का मग रुक जाता है;
जो आत्म-समर्पण करने से मिलते हैं-
उन वरदानों से प्रेम नहीं करता हूँ !
मैं पाषाणों से प्रेम नहीं करता हूँ !

जो मिलन कामना ही में गल जाते हैं ,
या विरह वेदना ही में जल जाते हैं;
जो स्वाभिमान को त्याग किन्हीं नयनों के ,
कुछ संकेतों के साथ मचल जाते हैं;
जो तूफ़ानों के साथ नहीं चल पाते
उन अरमानों से प्रेम नहीं करता हूँ।

मुझको प्रिय का आलिंगन रोक न पाया,
मुझको ममता का बन्धन रोक न पाया;
गीली पलकों ने मुझे रोकना चाहा
मेरी गति उर का कम्पन रोक न पाया;
मैं अंगारों के साथ खेलने वाला
मृदु-मुस्कानों से प्रेम नहीं करता हूँ!
मैं पाषाणों से प्रेम नहीं करता हूँ।

[४३]

कुछ सोच समझ कर चलो यहाँ
मधु-ऋतु के मदमाते समीर !
यह वह तट जो मादकता की
लहरों से टकराता रहता,
सागर की मर्यादा समेट
अनुराग गीत गाता रहता,
यह वह मधुवन जो हँसता ही
रहता लतिका की बाहों में,
यह वह कलिका का प्रेम
सदा जो छवि सा लहराता रहता;
यह वह प्रदेश जो यौवन की
नव अभिलाषाओं से अधीर !
कुछ सोच समझ कर चलो यहाँ,
मधु-ऋतु के मदमाते समीर।
मृदु हास लुटाती रहती हैं
अरमान भरी हँसती कलियाँ,
सुमनों पर मँडराती रहतीं,
बेसुध हो कर मधुपावलियाँ;

सन्ध्या आती ले नये स्वप्न,
बिखरा जाती नभ में तारे,
चुपचाप किया करती उपवन में
रजत-चन्द्रिका रँगरलियाँ;
रसमय सुरभित सुस्मृतियों से
खिल उठता सुमनों का शरीर!
कुछ सोच समझ कर चलो यहाँ
मधुऋतु के मदमाते समीर!

यह अन्तरिक्ष जो भरा हुआ
यौवन के मृदु अरमानों से,
यह नव-प्रकाश जो प्राण-ज्योति
पाता मधुरिम-मुस्कानों से;
पुलकित साँसों का घन-समूह
यह पवन सजल निश्वासों से,
मुखरित करता रहता जीवन-
संगीत प्रकृति के प्राणों से;
हैं सुधा धार से बुझे हुए
कुसुमायुध के मदभरे तीर!
कुछ सोच समझ कर चलो यहाँ,
मधु-ऋतु के मदमाते समीर!

[४४]

वह एक अधूरी बात मुझे प्यारी है !
प्रिय सावन की बरसात मुझे प्यारी है !

है याद वही जिसमें कुछ-कुछ तड़पन हो ,
है दर्द वही जिसमें कुछ अपनापन हो;
है स्वप्न वही जो सत्य न बनने पाये ,
है राग वही जिसमें मन का कम्पन हो;

युग सी सीमा अज्ञात मुझे प्यारी है !
प्रिय सावन की बरसात मुझे प्यारी है !

है जीत वही जिसमें जीवन का बल हो ,
है हार वही जिसमें अधीर हलचल हो;
है ध्यान वही जो परिधि ज्ञान की तोड़े ,
अनुमान वही जिसमें विवेक का छल हो;

अलकों सी काली रात मुझे प्यारी है !
प्रिय सावन की बरसात मुझे प्यारी है !

ये गीत वही हैं जो तुमने गाये थे ,
ये भाव तुम्हारे सपनों से पाये थे;
ये शब्द वही, जिनमें हैं चित्र तुम्हारे ,
जो खिच कर अपने आप चले आये थे;

इन गीतों की सौगात मुझे प्यारी है !
प्रिय सावन की बरसात मुझे प्यारी है !

[४५]

मेरी पलकों में बस जाओ !
मैं देखूँ प्रति क्षण में तुमको ,
मैं देखूं प्रति कण में तुमको ;
मेरे रूठे प्रियतम, मेरी
बिखरी अलकों में बस जाओ !
मेरी पलकों में बस जाओ !
प्रियतम मुझको अपना कर लो !
मैं अपनी अभिलाषा भूलूँ ,
मैं अपनी परिभाषा भूलूँ ;
नाचूँ दृग पलकों पर रुनझुन
मुझको स्वर्णिम सपना कर लो !
प्रियतम मुझको अपना कर लो !
मेरे उर के उद्‌गार बनो !
गाओ तुम मेरी तानों में ,
मेरे अन्तर अरमानों में ;
मेरी इस जीवन वीणा के
प्रियतम तुम झंकृत तार बनो !
मेरे उर के उद्‌गार बनो !

[४६]

सपने में देख लिया तुमको !
नयनों में जब तुम आ न सके ,
दृग खोज तुम्हें जब पा न सके;
तब आँख मींच फिर साँस खींच
अपने में देख लिया तुमको !
सपने में देख लिया तुमको !
तुम जा न सके जाते-जाते !
माना तुम बाल-विरागी थे ,
माना तुम व्रत-अनुरागी थे;
पर प्रेमपंथ को त्याग सुपथ-
तुम पा न सके पाते-पाते !
तुम जा न सके जाते-जाते !
तुम आकुल आह छिपा न सके !
भीगी पलकें कुछ बोल उठीं,
बिखरी अलकें मुख खोल उठीं,
तुम आकुलता तज कर अपना
उर अन्तर्दाह छिपा न सके !
तुम आकुल आह छिपा न सके !

[४७]

मन मिलन माँगो न मन से !
मत सुखद वरदान माँगो ,
मत सुखद अरमान माँगो ;
भेंट दो वर भक्ति दो तन
कुछ न माँगो अतन-तन से !
मन मिलन माँगो न मन से !
घिर घटा आई घुमड़ कर ,
बह चली सरिता उमड़ कर ;
नयन चातक बन रहो, पर
जल न माँगो सघन-घन से !
मन मिलन माँगो न मन से !
अमर हो जाये न ज्वाला ,
हो न मलिन प्रसून माला ;
अब विजय अपनी न माँगो
हृदय हँस-हँस हृदयधन से !
मन मिलन माँगो न मन से !

[४८]

भीख क्या माँगूँ प्रणय की !
चिर पिपासा सहचरी है ,
वेदना आँसू भरी है ;
हे असम्भव सा कि मैं-
कुछ बात कह पाऊँ हृदय की !
भीख क्या माँगूँ प्रणय की !
दे दिया सर्वस्व अपना
देखनेको एक सपना;
कामना की स्वप्न में भी
एक ही क्षण की विजय की !
भीख क्या माँगूँ प्रणय की
आज निज अभिमान खोकर ,
ध्यान खोकर ज्ञान खोकर ;
राग में बह कर भुला दी
चेतना स्वर ताल लय की !
भीख क्या माँगूँ प्रणय की !

[४६]

प्रेम दो प्रिय तो हृदय का दान भी दो !
आज नूतन प्राण नूतन मन बना लूँ ,
भूल कर भी भूल को जीवन बना लूँ ;
दो अचञ्चल ध्यान तो मुस्कान भी दो !
प्रेम दो प्रिय तो हृदय का दान भी दो !
दो विजय यदि तो पराजय को विजय दो ,
गीत स्वर में बाँध कर संगीत-मय दो ;
आज वीणा दो नये कुछ गान भी दो !
प्रेम दो प्रिय तो हृदय का दान भी दो !
वेदना दो किन्तु उसमें प्यार भी हो.,
स्वप्न ऐसा दो कि जो साकार भी हो ;
साधना दो प्रिय, मिलन वरदान भी दो !
प्रेम दो प्रिय तो हृदय का दान भी दो !

[५०]

ले कर ज्ञान करूँगा क्या मैं ?
ज्ञात मुझे अपनी कमज़ोरी ,
कर न सकूँगा चुप-चुप चोरी ;
है तुमको विश्वास पत्थरों से-
अभिमान करूँगा क्या मैं ?
ले कर ज्ञान करूँगा क्या मैं ?
है सुधार से प्यार न मेरा ,
होगा बेड़ा पार न मेरा ;
युग-युग से बहते प्रवाह की
गति पहचान करूँगा क्या मैं ?
लेकर ज्ञान करूँगा क्या मैं ?
कर न सकूँगा आत्म समर्पण ,
कर न सकूँगा जीवन अर्पण ;
मुझे न दो मेरे प्रभु ले ले कर
वरदान करूँगा क्या मैं ?
ले कर ज्ञान करूँगा क्या मैं ?

[५१]

तब मुझे अपने हृदय की
ध्वनि सुनाई दी !
श्वाँस में जब स्वर तरंगें खींच लीं मैंने,
और सम के साथ आँखें मींच लीं मैंने;
तब स्वयम् प्रति-छवि मुझे
अपनी दिखाई दी !
आह ! तब अपने हृदय की
ध्वनि सुनाई दी !
जब दिशाओं में लगा होने करुण क्रन्दन,
जब व्यथा-कुल प्राण में होने लगा कम्पन;
तब दिशाओं ने मुझे हँस कर-
बधाई दी !
और तब अपने हृदय की
ध्वनि सुनाई दी !
मृत्यु ने सस्नेह आलिंगन किया मेरा,
व्योम ने कर जोड़ अभिनन्दन किया मेरा;
शून्य जीवन ने मुझे रोकर
विदाई दी !
तब मुझे अपने हृदय की ध्वनि
सुनाई दी !

[५२]

दो क्षण के अरमान हमारे दो क्षण के अरमान !
चिर असत्य सारे सुख सपने,
भूले भ्रमित-भाव में अपने;
आहों से हम आकुलता का कर लेते अनुमान !
दो क्षण के अरमान हमारे दो क्षण के अरमान !
थक जायेंगे चलते-चलते,
उबल पड़ेंगे जलते-जलते;
आह ! हमारे उद्‌गारों को कौन सकेगा जान !
दो क्षण के अरमान हमारे दो क्षण के अरमान !
कभी वेदना के घन घिरते,
कभी अश्रु आँखों से गिरते;
कभी व्यथित हो पीड़ा को हम लेते हैं पहचान !
दो क्षण के अरमान हमारे दो क्षण के अरमान !
होने पाते स्वप्न न पूरे,
रहते जीवन गीत अधूरे;
फिर भी हम करते रहते हैं उनका अनुसन्धान !
दो क्षण के अरमान हमारे दो क्षण के अरमान !

[५३]

अंकित मेरे उर में अंकित
निष्ठुर जग के घातक प्रहार !
अंकित अंतर्पट पर अशान्ति ,
मेरे मानस से दूर शान्ति;
अंकित मेरे निश्वासों में
जीवन ज्वाला प्रज्वलित क्रान्ति ;
मेरे कानों में गूँज रहा
पीड़ित समाज का चीत्कार !
अंकित मेरी दृग-पलकों पर
अंकित दलितों की अश्रुधार !
जग के कण-कण का परिवर्तन ,
विप्लव युग का ताण्डव नर्तन;
अंकित मेरी आशाओं पर
कल-कल प्रवाह का आवर्तन;
मेरे स्मृति पट पर अंकित है
जाने कब से यह जीत हार !
जाने कब से मैं सुनता हूँ
निःशब्द दिशाओं की पुकार !

[५४]

मत पूछो, क्यों दुर्बलता को मैंने आज पुकारा !
मानव जीवन इसके इंगित
पर हिलोर लेता है,
मोड़ विवश धारा को बरबस
उसी ओर लेता है;
दुख क्या है यह किसी प्रणय के
भ्रान्त पथिक से पूछो,
जो थक कर झूठी आशा की
पकड़ डोर लेता है;
झूठ किन्तु यह झूठ रहा
जीने का एक सहारा !
मत पूछो क्यों दुर्बलता को
मैंने आज पुकारा !
ठहर सकी कब ये उतावले,
यौवन की अभिलाषा,
सत्य हुई कब मादकता की
भूल भरी परिभाषा;
जीत सके कब प्रणय द्यूत में
दाँव लगाने वाले,

तृप्त हुई कब चिर अतृप्ति की
तृषित अतृप्त-पिपासा;
यद्यपि रही सदा बहती
जीवन की बेसुध धारा !
मत पूछो क्यों दुर्बलता को
मैंने आज पुकारा !

रुके और कब लगे सोचने
मधु-मदिरा के प्याले,
और हुए कब शान्त
आग अधरों से पीने वाले;
मिला किसे अमरत्व
सुधा किसने केवल पी बोलो,
हुए भूल से दूर भला कब
याद न आने वाले;
सुमुखि भूल से भी कठोर है
मुक्ति ज्ञान की कारा
मत पूछो क्यों दुर्बलता को
मैंने आज पुकारा !

[५५]

क्यों दूर हृदय से प्यार नहीं होता है ?
अपने मन पर अधिकार नहीं होता है !

मैंने सुगन्ध कब माँगी थी फूलों से ,
मेरा विवेक कब उलझ गया शूलों से;
सच कहता हूँ प्रिय अब तक समझ न पाया ,
कब हुआ पराजित मैं अपनी भूलों से;

वे स्वप्न दृष्टि में घिर आते ही क्यों हैं
जिनका कोई आधार नहीं होता है ?
क्यों दूर हृदय से प्यार नहीं होता है ?
अपने मन पर अधिकार नहीं होता है !

मैं अपने को पहचान नहीं पाया हूँ ,
अपनी परिभाषा जान नहीं पाया हूँ;
वरदानों की आतुर अभिलाषाओं का ,
मैं कर कुछ भी अनुमान नहीं पाया हूँ;

मैं सोच रहा हूँ जीवन आशाओं का
अभिलाषाओं का भार नहीं होता है !
क्यों दूर हृदय से प्यार नहीं होता है !
अपने मन पर अधिकार नहीं होता है !

मैं बीती बातें याद किया करता हूँ,
उजड़ी दुनियाँ आबाद किया करता हूँ;
प्रिय परवशता के कुछ पश्चातापों पर,
मैं अब तक व्यर्थ विवाद किया करता हूँ;
मैं जान गया आँसू लड़ियों से प्रिय के-
चन्द्रानन का शृंगार नहीं होता है!
क्यों दूर हृदय से प्यार नहीं होता है
अपने मन पर अधिकार नहीं होता है!

[५६]

आँखें मींच लो चुपचाप !

गूँजती है कान में मृदु लोरियों की तान,
नाचते हैं चक्षुओं में स्वप्न के अरमान;
आ रही निद्रा रँगीली सुन पड़ी पद चाप !
आँखें मींच लो चुपचाप !

स्वप्न में गाओ मिलन के मधुर मंगल गीत,
आज तन्द्रा में डुबा दो, दुखद मधुर अतीत;
भूल जाओ कुछ क्षणों को वेदना संताप !
आँखें मीच लो चुपचाप !

लो सुनो कोई क्षितिज में गा रहा है राग,
भर रहा है लोचनों में मधुर-मधुर विहाग;
हो रहा झंकार में लय कर्ण-कटु आलाप !
आँखें मींच लो चुपचाप !

टूटने दो, टूटने दो चेतना का तार,
छूटने दो, छूटने दो वेदना का भार;
मत सुनो जग दे रहा वरदान या अभिशाप !
आँखें मींच लो चुपचाप !

[५७]

याद मुझे अभिशाप तुम्हारा !
धो न सकूँ मैं दाग पुराना,
खो न सकूँ अनुराग पुराना;
मेरा कण्ठ सुनाये जग को !
अन्तर्द्वन्द विलाप तुम्हारा !
याद मुझे अभिशाप तुम्हारा !
कर न सकूँ मैं आत्म समर्पण,
कर न सकूँ मैं जीवन अर्पण;
फिरता रहूँ छिपाये आहत-
उर में यह अनुताप तुम्हारा !
याद मुझे अभिशाप तुम्हारा !
पा न सकूँ अनुकूल किनारा,
पा न सकूँ जीवन की धारा;
किसी भाँति मैं समझ न पाऊँ
यह मेरा या पाप तुम्हारा !
याद मुझे अभिशाप तुम्हारा !

[५८]

मुझसे बेड़ा पार न होगा !
जल अथाह मैं युग का प्यासा,
सागर सी मेरी अभिलाषा;
मुझसे दूर प्रवाह न होगा !
लहरों का संसार न होगा !
मुझसे बेड़ा पार न होगा !
मेरा पथ मेरा पहचाना,
दीवानी गति मैं दीवाना;
बाधाओं का प्रेमी, मुझसे
शून्य पुलिन का प्यार न होगा !
मुझसे बेड़ा पार न होगा !
जीवन से है मेरा नाता,
बहती धारा मैं बह जाता
झंझावात बुलाता मुझको
चुप रहना स्वीकार न होगा !
मुझसे बेड़ा पार न होगा !

[५६]

आती क्षीण पुकार किसी की !
डूब रहा हूँ मुझे बचाओ,
या कि विमुख हो कर हट जाओ;
आज विजय देने आई है, तुमको पीड़ित हार किसीकी !
आती क्षीण पुकार किसीकी !
काँप उठो तो पास न आओ,
डूब सको तो हाथ बढ़ाओ;
सुनो, सुनो होती विलीन सी प्राणों की झंकार किसीकी !
आती क्षीण पुकार किसीकी !
अपनी बाहों का बल देखो,
बीत रहे चञ्चल पल देखो;
देख सको तो देखो, आँखों में दृगम्बु की धार किसीकी !
आती क्षीण पुकार किसीकी !

[६०]

जलद बरस जा !
सिहर उठे यौवन
नव-प्रकति विहँस उठे
और पावे जल तृषित-धरा
सुहृद बरस जा !
जलद बरस जा !
जाग उठे तृण-तृण
कण-कण से अनुराग उठे
लेकर अपना स्वरूप–
विशद बरस जा !
जलद बरस जा !
सन-सन करता समीर
डगमग पग अति अधीर
वन कर तू आज-
प्रणय-विरद बरस जा !
जलद बरस जा !

[६१]

मेघ घटा घिर काली आई !
रस बरसाते बादल आये,
रूप लुटाते बादल आये;
फिर तरसाते बादल आये,
फिर उमंग मतवाली आई !
मेघ घटा फिर काली आई !
लतिकाओं ने यौवन पाया,
सरिता में जीवन लहराया;
नयनों में छाई मादकता
उपवन में हरियाली आई !
मेघ घटा घिर काली आई !
चिर अतृप्ति के प्याले आये,
प्यास बढ़ाने वाले आये;
अपना संयम कोष लुटाती
अरुणासव की प्याली आई !
मेघ घटा घिर काली आई !

[६२]

ओ माली जाने क्यों तूने ये विष वृक्ष लगाये !
जड़ थी भूमि, बीज चेतन था,
उग आना उनका जीवन था;
एक क्षणिक कौतुक क्रीड़ा बस-
गरल बीज बिखराये !
ओ माली जाने क्यों तूने ये विष-वृक्ष लगाये !
जो पथ था सुरभित फूलों से,
वह पथ आज भरा शूलों से;
तूने सुधा सींच उपवन में
तीखे शूल बिछाये !
ओ माली जाने क्यों तूने ये विष-वृक्ष लगाये !
जग उपवन तेरा ही घर था,
तुझको किस प्रभुता का डर था;
क्यों तूने विषधर काँटों में-
सुन्दर फूल खिलाये !
ओ माली जाने क्यों तूने ये विष-वृक्ष लगाये !

[६३]

पूछता हूँ तुम बता दो आज इतना और !
है अभी कितनी प्रतीक्षा ?
क्या न होगी पूर्ण दीक्षा ?
क्या न दृढ़ता की हुई ,
पूरी विषम मेरी परीक्षा;
है अभी मुझ में प्रकृति का दोष कितना और ?
पूछता हूँ तुम बता दो आज इतना और !
मैं घनों से पिस चुका हूँ ,
पी हलाहल विष चुका हूँ;
रूप रंग सँवारने को
निज कलेवर घिस चुका हूँ;
क्या नुकीले रेत से है शेष 'रितना' और ?
पूछता हूँ तुम बता दो आज इतना और !
तुम तपा कर लाल कर लो ,
कूट कर कंकाल कर लो;
या मुझे कुछ चोट दे
टेढ़ा बना करबाल कर लो;
आज कर लो कर सको निर्माण जितना और !
पूछता हूँ तुम बता दो आज इतना और !

[६४]

पलट-पलट कर पथ से
मत देखो प्रिय मेरी ओर !

भुज बन्धन से रुक न सके तुम,
पग-वन्दन से रुक न सके तुम;
चले पथिक बन कर, बेसुध
व्याकुल क्रन्दन से रुक न सके तुम;
अब तो व्यर्थ, व्यर्थ सी है
मेरी आशा की डोर !
पलट-पलट पर पथ से
मत देखो प्रिय मेरी ओर !

आये थे आश्वासन लेकर,
चले प्राण जीवन धन लेकर;
अपने साथ-साथ मेरा भी-
चले आज अपनापन लेकर;
स्नेह दृष्टि से देख करो मत
चंचल हृदय हिलोर !
पलट-पलट कर पथ से
मत देखो प्रिय मेरी ओर!

[६५]

तब आ जाती है मुझको याद तुम्हारी !
जब शून्य-गगन में सघन घटा घिर आती,
जब चपल चंचला चमक-चमक छिप जाती;
रिम-झिम, रिम-झिम का राग सुनाते बादल,
कोयल तरुवर पर बैठ तराने गाती;
जब चमक-चमक उठती उर में चिनगारी !
प्रिय आ जाती तब बरबस याद तुम्हारी !
दृग तुम्हें हृदय के पास देखते रहते
तुमको मेरे निश्वास देखते रहते;
सच कहता हूँ प्रिय अपनी असफलता को
मेरे असफल विश्वास देखते रहते;
ओ मेरे यौवन की छलना सुकुमारी !
उफ़, आ जाती है मुझको याद तुम्हारी !
अपनी कठोरता पर मैं रो लेता हूँ
कुछ अश्रु बहा कर हलका हो लेता हूँ;
जो बीत गये वे क्षण न पुनः आयेंगे
बस यही सोच दुख अपना खो लेता हूँ;
प्रिय इस पीड़ा का ही मैं हूँ अधिकारी !
क्यों आ जाती है मुझको याद तुम्हारी ?

माना वह केवल दो क्षण का सपना था,
भ्रम सही किन्तु वह भ्रम भी तो अपना था;
पर रुको, दोष क्या इसमें सुमुखि तुम्हारा,
सौभाग्य, तुम्हारा नाम मुझे जपना था;
संसार कहे मुझको असफल संसारी!
यह याद तुम्हारी मुझे प्राण से प्यारी!

[६६]

जीवन शाप समझ कर पाया !
उर अथाह की थाह न पाई,
कोई सीधी राह न पाई;
परिभाषा मिट गई पाप की
यौवन पाप समझ कर पाया !
जीवन शाप समझ कर पाया !
अपनी पीड़ाओं में हँस कर,
जग की क्रीड़ाओं में हँस कर;
मेरे सुख का हाल न पूछो
सुख संताप समझ कर पाया !
जीवन शाप समझ कर पाया !
जीवन में सुख के क्षण थोड़े,
कितनी आशाओं से जोड़े;
कुछ संतोष मिला जो अपना-
अपने आप समझ कर पाया !
जीवन शाप समझ कर पाया !

[६७]

आज व्यथा पी कर बैठा हूँ !

दुख दारुण आयें सह लूँगा,
करुण कथा हँस कर कह लूँगा;
प्रस्तुत हूँ जीवनधारा में,
मैं नौका-विहीन बह लूँगा;
मृत हो कर भी आज मृत्यु से-
लड़ने को जी कर बैठा हूँ !

आज व्यथा पी कर बैठा हूँ !

आज न निःश्वासें खींचूँगा,
आज न मैं आँखें मींचूँगा;
इन-सूखी सी दृग पलकों को,
आज न रो-रो कर सींचूँगा;
आज विदीर्ण हृदय आशा के-
तारों से सी कर बैठा हूँ !

आज व्यथा पी कर बैठा हूँ !

काल कुटिल चालें भी चल ले,
भाग्य मुझे चाहे तो छल ले;
अभिमानी जग यदि चाहे तो,
आज मुझे पैरों से दल ले;
मैं अपना अस्तित्व शून्य नभ में-
विलीन ही कर बैठा हूँ!
आज व्यथा पी कर बैठा हूँ!

[६८]

सचमुच मैं कितना निर्बल हूँ !

प्रति क्षण मेरा जीवन बन्दी,
प्रति क्षण मेरा यौवन बन्दी;
बन्दी है मेरा मदिरहास,
प्रति क्षण मेरा क्रन्दन बन्दी;
अज्ञात इंगितों पर बहने वाला
मैं निर्झर का जल हूँ !

सचमुच मैं कितना निर्बल हूँ !

अपना अस्तित्व न ज्ञात मुझे,
जीवन का तत्व न ज्ञात मुझे;
अपनी लघुता का गुरुता का
सम्पूर्ण महत्व न ज्ञात मुझे;
जाने किस विद्युत धारा से
फिर भी मैं इतना चंचल हूँ !

सचमुच मैं कितना निर्बल हूँ !

यह जीवन कण-कण से निर्मित,
यह यौवन क्षण-क्षण से निर्मित,
जड़ता मेरी संज्ञा, मेरा-
अपनापन तृण-तृण से निर्मित;
मैं सरिता के उर से निकली
अनुराग भरी ध्वनि 'कल-कल' हूँ !
प्रेयसि मैं कितना निर्बल हूँ !

[६६]

तुम गाओ मैं गीत बनाऊँ !
तुम झंकार बनो मैं भाषा,
तुम अनन्त ध्वनि, मैं अभिलाषा;
तुम प्रवाह बन कर आओ,
मैं लहरों में मिल जाऊँ !
तुम गाओ मैं गीत बनाऊँ !

तुम मादकता की अरुणाई,
बन जाऊँ मैं नव तरुणाई;
बेहोशी तुम बनो, और मैं
उलझी लट सुलझाऊँ !
तुम गाओ मैं गीत बनाऊँ !

बन जाओ तुम कसक हृदय की,
और बनूँ मैं भूल प्रणय की;
मृदु मुस्कान बनो प्रिय,
मैं नयनों की प्यास बुझाऊँ !
तुम गाओ मैं गीत बनाऊँ !

[७०]

मेरा जीवन कितना उदास !
कल-कल करती सरिता आती ,
गुन-गुन गाती आती तरंग;
तट के हिलकोरों से दुखने-
लगता है मेरा अंग-अंग;
चुपचाप सुना करता हूं मैं लहरों का चंचल मंजुहास !
मेरा जीवन कितना उदास !
पाषाण हृदय फिर लघु शरीर
नि:प्राण और मैं गति विहीन;
दुर्भाग्य दुखद का दुखद रूप
मैं विधि रचना से पराधीन;
मैं लहरों का रोड़ा जग के पैरों का केवल क्रीतदास !
मेरा जीवन कितना उदास !
ठोकर खा-खा करके पाया ,
मैंने प्रिय पद का पद चुम्बन ,
पैरों के नीचे दब-दब कर
पाया प्रियतम का आलिंगन ,
पर आह ! द्रवित मैं हो न सका
बन सका न प्रिय का मदिरहास !
मेरा जीवन कितना उदास !

[७१]

देखो हुआ प्रभात !
नव विकसित कलियाँ हँसती हैं,
मणि मुक्तावलियाँ हँसती हैं;
तमको दूर भगा कर रवि की
झिलमिल रँगरलियाँ हँसती हैं;
हिल पड़ता है सुप्त-सरोवर खिल पड़ता जल-जात !
देखो हुआ प्रभात !
विटप वेलि सब झूम रहे हैं,
भ्रमर भ्रान्त से घूम रहे हैं;
नव प्रभात की नव उमंग में
सुमन, सुमन को चूम रहे हैं;
उपवन के कोने-कोने में जाग उठी है रात !
देखो हुआ प्रभात !
है प्रभात जगने की वेला
अरुण रंग रँगने की वेला.
है वियोग का समय किन्तु है
सुखद गले लगने की वेला;
अलसित नेत्र मद भरे जग के है पुलकित सा गात !
देखो हुआ प्रभात !